रिमझिम

डा० गोपालकृष्ण सराफ़

रिमझिम

डा० गोपालकृष्ण सराफ़

प्रथमावृत्ति
मई १९६६

आवरण एव चित्र-सज्जा
श्री इन्द्र दुगड़

मुद्रक
जनवाणी प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा० लि०
१७८, अपरचितपुर रोड, कलकत्ता-३

मूल्य
पाँच रुपये

प्रकाशक
मानसी प्रकाशन,
६, रसल स्ट्रीट, कलकत्ता-१६

वितरक
(१) हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय
१९५/१ महात्मा गांधी रोड, कलकत्ता-७
(२) सूर्य प्रकाशन-मंदिर
नेहरू-मार्ग, बीकानेर

भूमिका

मानव के चारों ओर एक विविध रूपात्मक तथा निरन्तर गतिशील बाह्य जगत है जिसके साथ कभी संघर्ष तथा कभी तादात्म्य करते हुए वह अपने भीतर भी विधि-बोधात्मक और रागात्मक जगत की सृष्टि करता चलता है।

बाह्य जगत से सम्पर्क के लिए उसके पास बुद्धि तथा हृदय की दो वृत्तियाँ हैं जिनके द्वारा उसे विविध सरल-जटिल बोध तथा अनुभूतियों की समृद्धि प्राप्त होती रहती है। बोध, मौन रह सकता है, परन्तु अनुभूति की स्वाभाविक परिणति अभिव्यक्ति ही है। यह परिणति ही मानव के साहित्य, कला आदि में अपना अस्तित्व खोजती है।

अभिव्यक्ति जीवन-धर्म कही जा सकती है, क्योंकि सभी चेतन, अवचेतन तथा प्रसुप्त चेतन जीवन रूपों में वह प्रत्यक्ष या गूढ़ स्थिति रखती है। मानवेतर जीव-जगत भी अपने परिवर्तनशील परिवेश में गति या चेष्टाओं द्वारा उल्लास या विषाद को व्यक्त करता रहता है। वसन्त के आगमन पर पशु-पक्षी जगत कलरव तथा नृत्य द्वारा अपने आनन्द की अभिव्यक्ति करता है और शीत में प्रकृति के साथ यह राग-रंग स्तब्ध हो जाता है।

अतिचेतना का अधिकारी होने के कारण मनुष्य की अभिव्यक्तियाँ प्राकृतिक परिवेश पर ही निर्भर नहीं रहती, वरन् वे अपने अन्तर्जगत के रागात्मक संस्कारों से भी संचालित होती हैं। वसन्त में कोकिल गाती है, परन्तु, मनुष्य अपने किसी प्रिय जन की स्मृति में आँसू भी गिरा सकता है। मेघ देखकर मयूर नृत्य करता है, परन्तु मनुष्य किसी वियोग-व्यथा से स्तब्ध भी हो सकता है। किन्तु जहाँ तक जीवन के एक व्यापक नृत्य का प्रश्न है, मानव भी समस्त सृष्टि के साथ बँधा हुआ है और वह भी प्रकृति के महाराग महालय को व्यक्त करता चलता है।

काव्य में मानव की रागात्मक सत्ता की पूर्णतम तथा सुन्दरतम अभिव्यक्ति सहज होने के कारण वह मानव-जीवन का सनातन संगी बने रहने का गौरव प्राप्त कर सका है। उसमें रूप, रंग, चित्त, लय और गति का

ऐसा संयोजन सहज है जो एक साथ अनेक मानव-वृत्तियों को परिष्कार का परितोष दे सके और एक की अनुभूति से अनेकों का तादात्म्य सम्भव कर सके।

काव्य में गीत को महत्वपूर्ण स्थान मिलने का कारण उसकी शुद्ध अनुभूतिपरकता है। उसमें अनुभूति की तीव्रता को शब्दों में इस प्रकार संगुम्फित किया जाता है कि वह स्वर-सामंजस्य में लयवती हो सके। गीत की अनुभूतिपरक रागात्मकता ने मानव-हृदय को इतना आकर्षित किया है कि वह जन्म से मृत्यु तक जीवन की सभी दुःखद-सुखद स्थितियों को प्रकृति के परिवर्तनशील ऋतु-परिवेश को तथा मानव की नीति-धर्म-ज्ञान विषयक उपलब्धियों को गीतों में छन्दायित करता आया है। काव्य के अन्य किसी रूप में इतनी विविधता नहीं मिलेगी जितनी गीत में मिलती है। दैनन्दिन जीवन के सुख-दुःख संयोग-वियोग को सहज सुबोध अभिव्यक्ति देनेवाले लोकगीतों से लेकर आत्मबोध की चरम पूर्णता को वाणी देनेवाले वेद-गीतों तक गीतों की आकाशगंगा फैली हुई है। वेद को तो छन्द की संज्ञा ही प्राप्त हो गई थी।

आधुनिक युग में खड़ी बोली ने अपने खड़ेपन में लचीलापन लाने के लिए पुनः गीतमुक्तकों में भावस्नान किया तो आश्चर्य नहीं। यह प्रगीत विविध है। कथापरक गीत, रहस्योद्भासित आत्मानुभूतिपरक गीत, प्रकृति-गीत आदि अनेक नाम रूपों में अवतरित गीतों ने हिन्दी को ओजमयी पर कोमल दीप्ति दी है।

'रिमझिम' में डा० कवि गोपालकृष्ण सराफ के कुछ प्रगीत मुक्तक संगृहीत हैं। सामान्यतः हमारी धारणा रहती है कि कवि किसी अन्य कार्य के उपयुक्त नहीं रहता। मुझे प्रसन्नता है कि डा० सराफ उक्त बद्धमूल धारणा को भ्रान्त सिद्ध करने में समर्थ हो सके। वे कलकत्ता जैसी महानगरी में व्यस्त नेत्र-चिकित्सक का गुरु कर्तव्य वहन करते हुए भी काव्य-रचना का अवकाश पा सके हैं।

उनके गीतों में भाषा के सहज प्रवाह के साथ कोमल-कठिन भावों का सामंजस्यपूर्ण संगम है, जो पाठक को अनायास आकर्षित कर लेता है। विश्वास है समय के प्रवाह में मज-धुल कर उनके गीत-सुमन उत्तरोत्तर सुरभि-समृद्ध हो सकेंगे।

१७।सी, अशोकनगर, प्रयाग —महादेवी
२-१-६६

रिमझिम : कुछ सम्मतियाँ

१

'रिमझिम' अपने ढंग का एक अनूठा काव्य-संग्रह है। डा० गोपालकृष्ण जी दैहिक जीवन के विशारद तो हैं ही, भावना-जगत् के भी अनुसन्धत्सु हैं। प्रस्तुत संकलन में उनके हृदय में सोया हुआ सौन्दर्य-मेघ अजस्र गीतिलय की भावमुग्ध झंकारों में जगकर बरस पड़ा है। कवि-हृदय की लालसा, दुविधा तथा निर्वेद को इसके सरस छंदों में उन्मुक्त भावप्रवण वाणी मिली है। इसमें मानव-हृदय के मिलन-विरह के स्वर हैं तो प्रकृति के अज्ञात सम्मोहन के प्रति मौन समर्पण का भी भाव है। कवि-मन तारों के रहस्य-भरे संकेतों की भाषा समझता है और उसकी भावना उससे अदृश्य रूप से परिचालित होती है। इस संग्रह की सब से बड़ी विशेषता यह है कि यह अपने छोटे-से कलेवर में अनेक काव्यात्मक विषयों के वैचित्र्य को सँजोए हुए है। इसमें कवि के विदेश-भ्रमण की प्रतिक्रियाएँ कवित्वपूर्ण ढंग से अंकित हैं ही, स्वदेश के जागरण के स्वरों से भी इसका उदात्त प्रांगण गुंजरित है। सब मिलाकर 'रिमझिम' की रचनाएँ मधुर एवं मर्मस्पर्शी बन पड़ी हैं। इसकी भाषा ललित, प्रांजल तथा प्रसादगुण के वैभव से सपन्न है। मैं डाक्टर गोपालकृष्ण जी को उनकी सफलता के लिए बधाई देता हूँ। मुझे आशा है भविष्य में भी वे इसी प्रकार भारती के प्रांगण को अपनी सृजन-प्रेरणा की रिमझिम से निरतर उर्वर रखेंगे।

१०-१२-६५ —सुमित्रानन्दन पन्त

जर्मन कवि गेटे बहुत बड़े कवि भी थे और वैसे ही बड़े वैज्ञानिक भी। विज्ञान और काव्य परस्पर विरोधी है, किन्तु, एक ही व्यक्ति कवि और वैज्ञानिक हो सकता है।

"रिमझिम" डाक्टर गोपाल सराफ की कविताओं का संग्रह है। डाक्टर वैज्ञानिक होते है, अतएव, ये कविताएँ एक वैज्ञानिक की चढ़ती जवानी की कविताएँ है।

अगर ये कविताएँ अपने समय पर प्रकाशित हुई होतीं, तो इनका मजा रसज्ञ और ढंग से लेते, अब किसी दूसरी तरह से लेंगे।

जैसे प्रवृत्ति और निवृत्ति धर्म की राजनीति है, उसी प्रकार क्लासिक और रोमांटिक को भी काव्य की राजनीति ही समझना चाहिए। फिर भी प्रत्येक युग की अपनी एक भावधारा होती है। आज वह भावधारा रोमाटिक नही है।

तब भी छायावादी शैली में लिखे गये गीत आज भी पसन्द किये जाते है। "आज की यह रात रूपसि, आज की यह रात" ऐसा ही गीत है जो मुझे काफी पसन्द आया है। वियना, पेरिस और स्विटजरलैंड पर लिखी कविताएँ भी अच्छी है।

१२-४-६६ —रामधारीसिंह 'दिनकर'

डा० गोपालकृष्ण सराफ की कविताओं का प्रथम संग्रह 'रिमझिम' के नाम से प्रकाशित होने जा रहा है। उनकी यह इच्छा है कि मैं इसकी सम्मति लिख दूं। मैं उनके प्रति आभारी हूँ कि वे उस रूप में मेरा नाम अपनी कृति के साथ संबद्ध करना चाहते हैं।

डा० सराफ आँख के प्रसिद्ध और कुशल चिकित्सक हैं, विदेशों में उन्होंने शिक्षा ग्रहण की है और विदेशों का पर्याप्त भ्रमण भी किया है। जीवन के उनके अनुभव विविध और व्यापक हैं। हर्ष की बात है कि उनमें साहित्य और काव्य के प्रति अनुराग है और सृजन में भी उनकी रुचि है। 'रिमझिम' की कविताओं में उन्होंने अपनी अनुभूतियों को वाणी दी है—स्वांतः सुखाय अथवा आत्म-संतोषार्थ। जहाँ तक आत्माभिव्यक्ति का प्रश्न है, मैं समझता हूँ, वे सफल रहे हैं। इनमें प्रेषण की कितनी शक्ति है अथवा ये कितनी स्वानुभूति जगाने में भी समर्थ हो सकेंगी, उसका निर्णय इनके पाठक करेंगे।

'रिमझिम' की कविताओं की भाषा सरल-सुबोध है; प्रायः वे अपनी बात परिचित रूपकों और प्रतीकों से कहते हैं; छंद-रचना पर उनका पूरा अधिकार है; मुक्त छंदों में लिखने का भी उन्होंने प्रयोग किया है। पाठकों को कहीं-कहीं छायावादी और छायावादोत्तर काल के कवियों की प्रतिध्वनियाँ मिलेंगी, पर यह तो आज के कवि का संस्कार है और इसके लिए लज्जित होने अथवा सफाई देने की आवश्यकता नहीं। यदि लेखन के द्वारा डा० सराफ अपना विकास करते रहें तो उन संस्कारों को आत्मसात कर वे कुछ अभिनव भी दे सकेंगे।

'रिमझिम' का मूल स्वर प्रेम है। 'प्रकृति' 'विदेश' और 'शंखनाद' खंड की कविताएँ इस संग्रह से अलग रक्खी जातीं तो ज्यादा अच्छा होता। प्रेमानुभूतियों को एक सहज क्रम में मुखरित किया गया है, जिसकी ताईद प्रायः अनुभवी करेंगे।

आशा है इन कविताओं से पाठकों का मनोविनोद होगा और उनसे प्रोत्साहन पाकर डा० सराफ भविष्य में और अच्छी कृतियाँ हमारे सामने प्रस्तुत करेंगे।

१३, विलिंगडन क्रिसेंट, नई दिल्ली–११ —बच्चन

दो-शब्द

जो लोग कविता लिखना एक अनोखापन मानते हैं, मैं उनकी बात नहीं करता। मैं अनोखा नहीं हूँ और न ही बनने की सोचता हूँ। मेरे लिए कविता लिखना बहुत ही सहज रहा है।

जाने-अनजाने युग का परिवेश और साहित्य में प्रचलित धाराओं का, वादों का प्रभाव रचनाकार के अचेतन पर पड़ता ही है, ऐसा मेरा विश्वास है।

जिन दिनों मैंने ये कविताएँ लिखी, उन दिनों कवि-सम्मेलनों में बच्चन जी का एकमात्र राज्य था—प्रत्येक व्यक्ति की जबान पर "इस पार प्रिये मधु है तुम हो" (बच्चन) की ही धुन थी। बच्चन जी ने भी ये सस्कार पूर्ववर्ती कवियों से ही पाये थे और उस पर उन्होंने सूफी प्रेम का रंग चढ़ाकर प्रस्तुत किया। दूसरी तरफ पन्त, प्रसाद, महादेवी और निराला के गीतों की गूंज थी। स्वाभाविक था कि मेरे 'रिमझिम' के गीतो पर छायावादी और छायावादोत्तर कवियो की छाप पड़ती और पड़ी भी!

मैंने रिमझिम के गीत प्रायः १६४० से १६५५ के बीच की अवधि में लिखे थे।

नौ अगस्त वाली कविता नौ अगस्त सन् १६४२ को लिखी थी जब कि मैं लखनऊ विश्वविद्यालय का छात्र था और मंकी ब्रिज पर छात्रों के जुलूस में शामिल था।

पन्द्रह अगस्त का गीत मैंने १५ अगस्त सन् १६४७ को लिखा और आगरा मेडिकल कालेज के होस्टल में उसी दिन जलसे में सुनाया।

१६५४ मे विदेश गया। वहाँ जो भी मिला, वह 'वियना', 'पेरिस' और 'स्विट्जरलैंड' शीर्षक गीतों में प्रस्तुत है।

मुझे विज्ञान और साहित्य दोनो ही समान रूप से प्रिय हैं। मैं यह नहीं मानता कि वैज्ञानिक का साहित्य से कोई नाता नही हो सकता। मेरी यह मान्यता है कि सफल चिकित्सक होने के लिये डाक्टर के पास कवि का हृदय भी होना चाहिये और उसकी अनुभूतिया इतनी तीव्र होनी चाहिये कि वह रोगी की पीड़ा को अपनी पीड़ा समझ सके। मैं नेत्र-

विशेषज्ञ हूँ, नेत्रों का आपरेशन भी करता हूँ और उनको कवि की आँखों से देखता भी हूँ।

मैंने ये गीत स्वान्तः सुखाय लिखे थे, इसलिये ये गीत कभी प्रकाशित नहीं हुए। एक युग बीत जाने के बाद आज मेरे मित्रों ने इनको प्रकाशित करने का निश्चय किया है। आज के और रिमझिम के गीतों में बहुत बड़ा परिवर्तन आ गया है। परन्तु मैं इन गीतों को अपने पाठकों के सामने प्रस्तुत कर रहा हूँ इसी विश्वास के साथ कि इसका मूल्यांकन उसी युग-परम्परा के साथ किया जायेगा, जिसमें ये लिखे गये थे। इस पुस्तक को समय और प्रेस के भार से मुक्त करवाना मेरे वश का रोग नहीं था। जिन मित्रों ने अपने भागीरथ प्रयत्नों द्वारा इसे उबारा है, उन सबका मैं आभारी हूँ।

मैं जीवन जी (गोरखपुरी) का आभारी हूँ, जिन्होंने बचपन में मेरे लंगड़े छंदों को चलना सिखाया और श्री इन्द्र दुगड़ का, जिन्होंने अपना अमूल्य समय लगाकर रिमझिम को अपने चित्रों से सजाया। दो चित्र मेरी पुत्री कु० उषा के भी हैं और उसे धन्यवाद देना भी मेरा कर्तव्य है।

मैं आभारी हूँ श्रीमती महादेवी वर्मा, श्री सुमित्रानन्दन पन्त, श्री रामधारीसिंह "दिनकर" और डा० हरिवंश राय "बच्चन" का, जिन्होंने अपनी सम्मतियाँ लिख कर "रिमझिम" को अपने पाठकीय विचारों से सम्पन्नता दी है।

अन्त में आभारी हूँ श्री हरीश भादानी और श्री हर्ष का, जिन्होंने मुझे आज की कविता धारा के साथ जोड़ा है। इसीके परिणामस्वरूप इस पुस्तक की अन्तिम कविता रिमझिम से बरसात बन गई और संवेदन के विस्तृत कैनवास पर अपने युग के रूप-शिल्प के साथ हुई अभिव्यक्तियों का दूसरा चरण भी प्रकाश में आने को है, मुझे अपने विज्ञ पाठकों के वैचारिक अपनत्व की अभिलाषा रहेगी।

६, रसल स्ट्रीट,
कलकत्ता - १६
१५-५-६६

—डा० गोपालकृष्ण सराफ़



समर्पित—

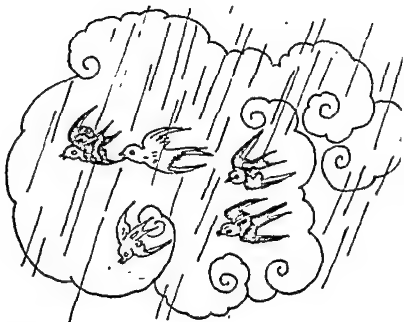
उन सपनों को
जिन्होंने
मुझे
रिमझिम के स्वर में
कभी हँसाया
और
कभी रुलाया

संकेतिका

प्रथम पंक्तियाँ

रिमझिम

उमड़ उठो रिमझिम के स्वर में,
प्यार भरी मोहक ममता बन।



रिमझिम

ओ बादल मेरे मानस के
बरसो तुम सुन्दर स्नेह सजल,
बरसो जगती के कण-कण में
बरसो तुम झूम-झूम प्रतिपल।

बरसो तंद्रिल आंखें मल-मल
बरसो डगमग पैरों से चल,
बरसो हे शान्त स्निग्ध श्यामल
बरसो मादक रसधार तरल।

छलक उठे धरती का प्याला
मिट जाये जीवन की ज्वाला,
तुम साक़ी, मैं पीनेवाला
यह जग बन जाये मधुशाला।

इन खेतों में हो हरियाली
निखर उठे आशा की लाली
पुरवैया के मधु झोंकों से
झूम उठे तरु-तरु की डाली।

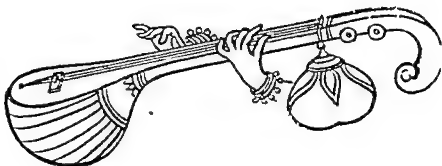
बरसो क्षेममयी क्षमता बन
बरसो संसृति की समता बन,
उमड़ उठो रिमझिम के स्वर में
प्यार भरी मोहक ममता बन,

बरसो मानव में स्नेह सघन
बरसो तुम जग की सुषमा बन,
बरसो मेरे घन, मेरे घन,
बरसो चिर अव्यय, चिर नूतन।

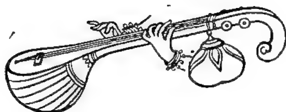


कौतूहल • • • • •

- कौन ?
- कहाँ ?
- क्यों ?
- कोई !



छूकर अन्तर के तारों को
छिपकर गाने वाली कौन ?



कौन ?

मेरे उर के अन्तराल में
थामे भावों की मृदु डोर,
सूनेपन की इस वेला में
क्या करने आयी इस ओर?

मानस की नीरव तंत्री को
झंकृत करने वाली कौन?
प्राणों में मधुमयी पुलक-सी
सिहरन भरने वाली कौन?

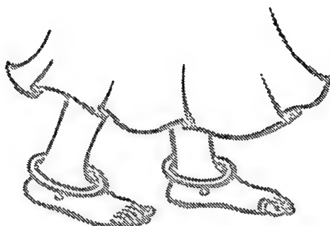
सुप्त जलधि में ज्वार उठाकर
स्वयं निमज्जित होती कौन?
दुखिया आंखों के मोती से
सहसा सज्जित होती कौन?

छूकर अन्तर के तारों को
छिपकर गाने वाली कौन?
जगती के नीरस मरुथल पर
रस बरसाने वाली कौन?

कभी हँसाती, कभी रुलाती
पागल मुझे बनाती कौन?
बरसाने की राधारानी।
बनकर रास रचाती कौन?

अपने मूक मधुर भावों के
कुछ रहस्य भी खोलो तो,
भूली-सी पहचान सलोनी
बोलो, कुछ भी बोलो तो।





कहाँ ?

अलसायी तंद्रिल पलकों पर
मादक यौवन का भार लिये,
मस्ती की मोहक चितवन में
कुछ जीत लिये, कुछ हार लिये।

कुछ अलस भाव की दुनिया में
मदभरी प्रतीक्षा प्यार लिये,
निद्रित निशीथ में सजा हुआ
मृदु सपनों का संसार लिये।

प्राणों को बाँध रही-सी कुछ
भावों का मोहक तार लिये,
भोले संकेतों में कितने
बेसुध हृदयों का हार लिये।

जगती के उजड़े उपवन में
हँसती सी मधुर बहार लिये,
मंजुल मुस्कानों में मधुमय
मस्ती का पारावार लिये।

नीरवता की इस बेला में
झीनी सी कुछ झंकार लिये,
उर के मरु-थल में उतरी तुम
मादक मधुरस की धार लिये।

बीहड़ पथ मंज़िल दूर प्रिये
तम का है प्रबल प्रसार प्रिये,
तुम कौन कहाँ बढ़ती आती
किन भावों का संसार लिये ?





क्यों ?

मेरे मन में क्यों अंकित है उसकी धुंधली छाया ?
मुझे भावना में भरमाती आज उसी की माया।

इन आँखों में बसी युगों से कैसी रूप-पिपासा।
एक आस बन गई प्यार की प्राणों की परिभाषा।

जीवन की पहली मंजिल में उसे स्वप्न सा देखा,
किन्तु कहीं भी उभर न पाई जिसकी कोई रेखा।

जीवन के एकाकीपन में छिपकर कोई आती,
नीरवता में धीरे धीरे कौन रागिनी गाती?

जिसके स्वर स्वर में मादकता, मोहकता की धारा,
डूब गया जिसमें खोये प्राणों का कूल किनारा।

झलक दिखा जाती हैं जाने किसकी फैली बाँहें,
एक राह से घिरी दीखतीं पिछली छूटी राहें।

इन प्राणों में एक नई आकुलता भरने वाली,
मदहोशी से भरी हुई सब सुध-बुध हरने वाली।

बहुत हो चुकी लुका-छिपी यों अब न मुझे भरमाओ
जीवन संगिनि बनकर मेरी ओ रस रंगिनि, आओ।





कोई !

रह रह कर जल उठतीं तम में
धुंधली सी दीपावलियां
अभिलाषाएँ मचल-मचल कर
रचा रही कुछ रंगरलियां।

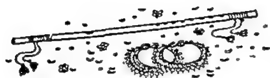
नीरव स्वर में आज सरस
संगीत सुनाई देता है
कौन भेद है चुपके से जो
सुध-बुध सब हर लेता है?

शान्त हृदय के रंगमंच पर
यह मादक नर्तन कैसा?
जीवन की सूनी घड़ियों का
सहसा परिवर्तन कैसा?

मधुमस्ती से छलक रहा क्यों
भावों का रीता गागर?
आज ज्वार से खेल रहा है
मूक-मौन सोया सागर।

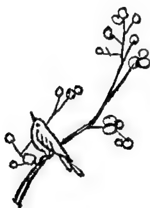
उकसा कर उर के तारों को
छिपकर कोई गाता है
नयनों की सूनी कुटिया में
कोई अलख जगाता है।

प्राणों में भर विकल पिपासा
बन जाता है मौनी कोई
खेल रहा अपनी छाया से
छिपकर आँख मिचौनी कोई!



लालसा • • • • •

- कैसे प्यार तुम्हारा पाऊँ ?
- तुम से पाई प्यास हृदय ने
- एक बूँद मधु दे दो
- मैं तुझ में लयलीन हो चलूँ
- एक बार मधु ढालो
- जाना है उस पार



मैं चातक-सा रटूँ निरंतर,
प्यासा अंतर,



कैसे प्यार तुम्हारा पाऊँ ?

तुम शशि की आभा सी बिखरो,
रजत रश्मियों में तुम निखरो,
प्राण-प्राण में पुलक भरो तुम,
ताप हरो तुम,
मैं चकोर सा अपलक देखूं, चुन-चुन कर अंगारे खाऊँ
कैसे प्यार तुम्हारा पाऊँ ?

सघन घटा सी नभ में डोलो,
रिमझिम रस की बुंदियाँ घोलो,
मैं चातक सा रटूं निरंतर,
प्यासा अन्तर,
बोलो तो कब तक इस मरु में, रट से अपनी प्यास बुझाऊँ
कैसे प्यार तुम्हारा पाऊँ ?

तुम कलि सी मुस्कान पसारो
संकेतों के जादू मारो
मदहोशी के गायन गाओ
रस बरसाओ
अलि-सा अपनी इन भूलों में मैं शूलों से बिंध-बिंध जाऊँ
कैसे प्यार तुम्हारा पाऊँ ?

स्नेह भरी-सी दीपशिखा तुम
अपनी ही आभा में गुमसुम
बलि वेला के राग रंग-सा
मैं पतंग सा
जी में आता है प्रिय अब तो जलकर मैं तुम में खो जाऊँ
कैसे प्यार तुम्हारा पाऊँ ?





तुम से पायी प्यास हृदय ने

जाग उठी है प्यास हृदय की ओ साकी मतवाले
मधुर मिलन की मधुवेला में जीभर तू मधु ढाले

तुमसे पायी प्यास हृदय ने तुमसे सीखा पीना
प्राण ! तुम्हारी दो बूंदों में मेरा मरना-जीना

तुमने अपनी रूप राशि को इन नयनों में ढाला
मेरे अँधियारे आँगन में तुमने किया उजाला

तुमको पाकर मन की कुटिया नंदन वन सी फूली
तुम्हें देख कर मेरी आँखें सारे जग को भूलीं

आज झिझकते हुए अचानक लेकर खाली प्याला
मैंने हाथ बढ़ाये तुमने भर दी उसमें हाला

मैं पीकर बन गया तुम्हारा जनम-जनम आभारी
मैंने तुमको अर्पण कर दी अपनी दुनिया सारी

जाग उठी है सोयी मस्ती ओ प्रेमी ओ दानी
जीवन के इन मधुर क्षणों में होने दो मनमानी।





एक बूँद मधु दे दो

अगर कहो तो कर लूं तुमको
एक बार में प्यार
पहना दूं तुमको मै अपनी
चिर पूजा का हार

प्यास बुझेगी जीवन भर की
एक बूंद मधु दे दो
मेरे दिल की भरी दुआएँ
झोली भर-भर ले लो

तेरे मधुघट की तलछट पी
दीवाना बन जाऊँ
पल भर का यह गान तुम्हारा
युगों-युगों तक गाऊँ

सजनि तुम्हारी मदहोशी में
अपनी सुधबुध भूलूँ
एक बार भी सरस परस मय
छवि की छाया छू लूँ

जब मैं भी मधुपायी तेरा
क्या अपना बेगाना
एक ओर है भरी सुराही
एक ओर पैमाना

एक बार बादल की बाँहों-
में बिजली आ जाये
जीवन की काली रजनी यह
राका-सी मुस्काये





मैं तुझ में लयलीन हो चलूँ

ओ मेरे मानस की गंगा
मेरे मन में बहा करो

तेरा कल-कल का स्वर रूपसि साँसों का संगीत बने
नीरवता की इस दुनिया में प्यार भरा-सा गीत बने
तेरे पथ का पत्थर-पत्थर नित्य नया नवनीत बने
अभिनव अभिसिंचन से पल मे ज्वलित आग भी शीत बने

चट्टानों की कड़ी ठोकरें
सदा फूल-सी सहा करो
ओ मेरे मानस की गंगा
मेरे मन में बहा करो

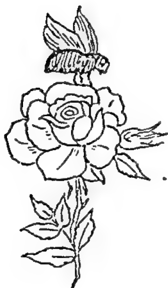
जिसके एक-एक कम्पन में जीवन का इतिहास मिले
जिसके मृदुल मंच पर सचित मन प्राणों का रास मिले
अरी रुदन के अधरों पर भी हिलता हीरक हास मिले
भावों के पतझड़ में मोहक मुस्काता मधुमास मिले

नई चेतना नव जीवन की
मधुर कहानी कहा करो
ओ मेरे मानस की गंगा
मेरे मन में बहा करो

गति का जादू मुझे-तुझे दोनों को एकाकार करे
युगों-युगों की टूटी वीणा के भी मुखरित तार करे
यह अपनी गतिशील भावना कण-कण में अभिसार करे
पाये प्यार विश्व का प्रतिपल सदा विश्व को प्यार करे

मैं तुझ में लयलीन हो चलूं
तुम भी मुझमें रमा करो
ओ मेरे मानस की गंगा
मेरे मन में बहा करो।





एक बार मधु ढालो

मैंने देखा पुष्पों पर भ्रमरों का मधुमय गुंजन
मैंने देखा द्रुमदल से लतिकाओं का आलिंगन

कोयल का पंचम स्वर में वह मधु सन्देश सुनाना
विरही चातक का पी-पी की निसि दिन रटन लगाना

देखा था चाहक चकोर को शशि से आँख मिलाते
मीन बापुरी को देखा था नीर बिना दुख पाते

मैंने देखा था सरिता को रुन झुन रुन झुन गाते
सागर से मिलने को व्याकुल गीत मिलन के गाते

अपलक तारों को देखा था रात-रात भर रोते
जाने किसको ढूँढ़ रहे थे सुधबुध अपनी खोके

मैंने अपनी दुनिया देखी माया उसको सूना
कोयल कूकी चातक रोया और हुआ दुख दूना.

खलने लगा निरंतर मुझको यह जीवन एकाकी
मेरी अमर प्यास फिर मुझ से रूठा मेरा साकी

अपनी मधुशाला की संचित कुछ तो लाज सम्हालो
मेरे इस रोते प्याले में एक बार मधु ढालो।





जाना है उस पार

इन लहरों का मौन निमंत्रण बरबस मुझको खींच रहा है
बँधे हुए पाँवों के मरु को गति का बादल सींच रहा है
गति में ही जीवन की गुरुता गति जीवन का गान निरंतर
गति की सीमा में मिलती है प्राणों की पहचान निरंतर
मुझ राही पर संकेतों के ये जादू मत मारो
जाना है उस पार मुझे प्रिय तट से तुम न पुकारो

ह जीवन की धार प्यार के दो कूलों के बीच पल रही
कहाँ रुकी कब बोलो, प्रेयसि, चलना है दिन रात चल रही
कभी यहाँ इस पार कभी उस पार वहाँ इसकी मंजिल है
चाहे जो हो किसी भाँति भी इसका रुक रहना मुश्किल है
कर्तव्यों के ऊपर ऐसा तुम मत मोह पसारो
जाना है उस पार मुझे प्रिय तट से तुम न पुकारो

ह सच है मन के सागर में सुधियों की उठ रहीं हिलारें
उस अतीत के उन भावों की झूम रही मादक झकझोरें
पर इन उठते तूफानों के बीच मुझे चलते रहना है
पथ के आरोहावरोह में चढ़-चढ़ कर ढलते रहना है
होगी जीत तुम्हारी, मेरे अपनेपन से हारो
जाना है उस पार मुझे प्रिय तट से तुम न पुकारो।



○ मुझ को मत बाँधो बंधन में
○ पा सकोगी प्यार मेरा?
○ दे दूँ क्या तुम को पतवार?



तिनकों की कारा रहने दो
उड़ने दो उन्मुक्त गगन में
मुझको मत बाँधो बंधन में



मुझ को मत बाँधो बंधन में

प्यास भरी मेरी पाँखें हैं
उड़ने की लाचारी इनमें
एक नशा छाया जो उसको
आयी नहीं खुमारी इनमें

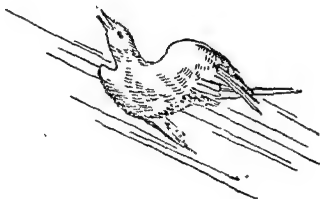
तिनकों की कारा रहने दो, उड़ने दो उन्मुक्त गगन में
मुझको मत बाँधो बंधन में

सुबह हुई तो उड़ा जहाँ भी
शाम हुई बन गया बसेरा
होता ही रहता है प्रतिपल
इन पागल प्राणों का फेरा

रुकी कहाँ कब गति की बिजली बोलो किस गदराये घन में
मुझको मत बाँधो बंधन में

गति ही है जीवन की गुरुता
गति जीवन का शाश्वत क्रम है
थिरता में जीवन की कुंठा
रुकना तो भावों का भ्रम है

टिक न सकेगा प्राण ! परायापन इस मेरे अपनेपन में
मुझको मत बाँधो बंधन में।





पा सकोगी प्यार मेरा ?

तुम निरी भोली - भलीसी
एक सुगबुगती कलीसी
और मैं झंझा झकोरों में पला हूँ
कौन जाने किस घड़ी में कब चला हूँ
पत्थरों में प्यार भरता
ठोकरों से भी निखरता

कौन जाने किन युगों से है यही व्यापार मेरा
पा सकोगी प्यार मेरा ?

तुम मुझे तट पर न रोको
स्वयं को, मुझको विलोको
प्राण ! लहरों से मुझे मझधार
कब से है बुलाती
मृत्यु की ध्वनि किन युगों-
से जिन्दगी के गीत गाती

है नहीं संभव, बदल जाये अभी संसार मेरा
पा सकोगी प्यार मेरा ?

आज आँखों और अन्तर में
ग़ज़ब का द्वन्द्व पलता
और धरती पर विषमता का
चतुर्दिक चक्र चलता
आ रहा तूफान खोले पंख
और हाथों में लिये मैं शंख

वीन टूटी और टूटा ज़िन्दगी का तार मेरा
पा सकोगी प्यार मेरा ?





दे दूँ क्या तुमको पतवार ?

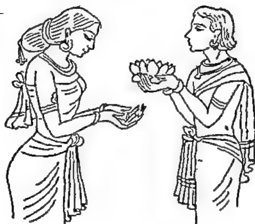
जाने कितनी दूर किनारा
दीख नहीं पड़ता ध्रुव तारा
अंधकारमय जग है सारा, बहती द्रुत गति से जलधार
दे दूँ क्या तुमको पतवार ?

झंझा के ये झोंके भारी
निर्बल कोमल बाँह तुम्हारी
डगमग डगमग नाव हमारी, पहुँच सकोगी क्या उस पार
दे दूँ क्या तुमको पतवार ?

तुम जग की कटुता क्या जानो
लहरों की पटुता क्या जानो
तुम अपनी मृदुता क्या जानो, बोलो ! लोगी क्या यह भार
दे दूँ क्या तुमको पतवार ?

अभिलाषा की बदली घिरती
आशा बन कर चपला फिरती
फिर आँखों से बूँदें गिरती, रोते उर वीणा के तार
दे दूँ क्या तुमको पतवार ?

सजनि हमारा नूतन नाता
सपनों का संसार बसाता
तुम पर प्रेम प्रसून चढाता, मन में मेरे पागल प्यार
दे दूँ क्या तुमको पतवार ?



समर्पण ० ० ० ० ०

० थमा चुका मैं तुम्हें



थमा चुका मैं तुम्हें प्यार से
जीवन की पतवार प्रिये
मुझे डुबा दो इन लहरों में
चाहे कर दो पार प्रिये



थमा चुका मैं तुम्हें

नीचे नील सिंधु लहराता
ऊपर नीलाकाश प्रिये
मेरा जीवन-पोत जा रहा, लिये कौन विश्वास प्रिये

चारों ओर शोर करता-सा
जोर बँधा है ज्वारों का
इस कोलाहल में शुमार क्या, मेरी क्षीण पुकारों का

उफ् ! तूफान भरी धारा का
कहाँ किनारा कूल कहाँ
किन भँवरों में भरमाती है, मेरे मन की भूल कहाँ

मंजिल का क्या पता कि
जिसकी दूरी का अंदाज़ नही
यह कैसा अभियान अभी तक, खुला कि जिसका राज़ नहीं

रात अँधेरी बिजली बादल
आघातों से ऊब गया
ऐसा लगता है पल में ही, अब डूबा अब डूब गया

थमा चुका मैं तुम्हें प्यार से
जीवन की पतवार प्रिये
मुझे डुबा दो इन लहरों में, चाहे कर दो पार प्रिये !



मिलन • • • • •

- तन - मन प्राण जुड़ालें
- मिलने का समय सलोना है
- बजी बीन मादक समीर की
- आज की यह रात



जाने इन प्यारी आँखों में
यह सच है या सपना
कैसे हो जाता है पल में
एक पराया अपना



तन-मन प्राण जुड़ा लें

जीवन भर मै उड़ा रात दिन, मन में पीड़ा पाले
डाल-डाल पर पात-पात पर, कितने फेरे डाले

किन्तु मिलन का प्रात, विरह की
सध्या से घिर आया
प्राणों के सागर में जिसने
आकुल ज्वार उठाया

एक हूक उठ गई, भर गया
उर का कोना - कोना
यह किस्मत की रेख उसे
कुछ आँसू से क्या धोना

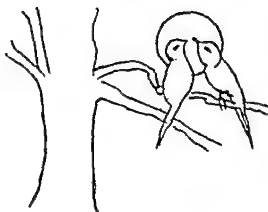
उफ़ कितना लम्बा यह जीवन
साँसों का यह फेरा
इन प्राणों में विरह व्यथा का
ऐसा विषम बसेरा

आज अचानक संकेतों से
तुमने जादू मारा
और जीत में वदल गया जो
अव तक मैंने हारा

जाने इन प्यासी आँखों में
यह सच है या सपना
कैसे हो जाता है पल में
एक पराया अपना

प्राण! प्यार के पागलपन ने
एसा पल्टा खाया
पथ की दूरी दूर हो गई
मंजिल ने मुस्काया

हम तुम पंछी एक डाल पर
चल कर नीड़ बनालें
एक साथ हिल मिल कर दोनों
तन - मन प्राण जुड़ालें





[illegible] सलोना है

अपने मन के मृदु भावों स
मन-प्राण मनोरम मिल जायें
इन अरुण मिलन की किरणों से
भावों के सरसिज खिल जायें

दो दीवानों की दुनिया में
सपनों में कहीं दुराव न हो
हम एक-एक दो एक बनें
फिर दो का कोई भाव न हो

ऊषा की स्वर्णिम लाली-सी
हम में भी नव लाली जागे
सुख की हाला से भरी हुई
उल्लासों की प्याली जागे

दो पल की मस्ती मिली हमें
पल भर का मिला तराना है
जीवन की सीमित साँसों का
क्या जाने कौन ठिकाना है

जो बीत चुकी सो बीत चुकी
आगे जाने क्या होना है
आओ, हिल मिल लें, प्रेम करें
मिलने का समय सलोना है





वजी बीन मादक समीर की

वजी बीन मादक समीर की
ताल दे रहा सागर
ढाल रही है आम्र-मंजरी
मधुमय रस की गागर

'कुहू-कुहू' कर कोयल वोली
चातक ने स्वर साधा
तरु-तरु मे रम रहे कन्हैया
पात-पात में राधा

झूम उठी वल्लरी लतायें
कलि ने घूंघट खोला
उमड़ उठी मस्ती की धारा
भँवरों का मन डोला

सरसों की पीली साड़ी से
अपना रूप सजाना
वधू वेष मे वासन्ती का
देखा जग में आना

जड़ चेतन के मन पर छ या
छवि का जादू टोना
आज सुरभि से महक उठा है
जग का कोना-कोना

सज-सज कर चल पड़ीं प्यार स
जूही - चम्पा - वेला
कुसुम-कुसुम से उमड़ उठा है
यह मस्ती का मेला

मधु ऋतु की पायल की रुन झुन
जागी नई जवानी
कण-कण के अन्तर में गूंजी
मधुर प्यार की बानी

इस मस्ती की मधुवेला मे
रसकी धार उड़ेलें
दो प्राणों का खेल मनोरम
चलो खुशी से खेलें





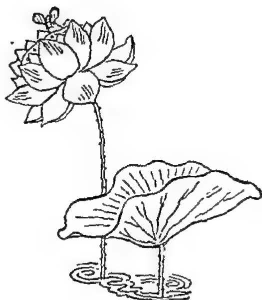
आज की यह रात रूपसि
आज की यह रात

मंजु मधु की धार ढाले
मौन मन में प्यार पाले
प्राण! पूनम ने सजाया, आज अपना गात
रूपसि! आज की यह रात

मौन अम्बर, मौन धरती
एक सिहरन सी उभरती
और तारों की कतारों की भरी बारात
रूपसि ! आज की यह रात !

कौन अभिलाषा सँजोये
कौन सी भाषा सँजोये
सुन रहा हो चाँद जैसे चाँदनी की बात
रूपसि ! आज की यह रात !

मधु मिलन के गीत गाओ
प्राण ! प्राणों में समाओ
खिल उठे जिससे कि मादक प्यार का जलजात
रूपसि ! आज की यह रात !



विवशता ० ० ० ० ०

- अधरों ने जब हँसना चाहा
- जलकर बुझती बुझकर जला
- उलझ गया.....................
- यह मेरा भय



एक रेख जो खिंची पीर की
कोई उसे मिटाये कैसे ?



अधरों ने जब हँसना चाहा

अधरों ने जब हँसना चाहा
आँखों ने आँसू बरसाये
मैंने माँगे गीत मिलन के
फिर भी गान विरह के पाये

तुम बोले मुस्काओ भी तो
मैंने ऐसा करके देखा
अधरों की मुस्कान सलोनी
बन जाती विषाद की रेखा

साकी ढाल रहा था जी भर
मैंने भी तो हाथ बढ़ाया
सबके प्याले मधु से छलके
बोलो! कब मैंने क्या पाया?

जीवन भर मैं रहा खोजता
मिला न सुख का कोई कोना
सिंचा ओस के आँसू से ही
फूलों का संसार सलोना

रहे कहाँ से मस्त, कहाँ से
कोई मस्ती लाये कैसे
एक रेख जो खिंची पीर की
कोई उसे मिटाये कैसे?





जल कर बुझती, बुझ कर जलती

स्नेह धार से प्रतिपल पलती
अन्तर्दाहों से ही जलती
आशा और निराशाओं के,
झोंके और झकोरे खाती
मेरे जीवन की लघुबाती

यह कम्पन सकरुण साँसों का
आहों टीसों उच्छ्वासों का
स्वयं विनिर्मित सी छाया की,
छिन्न भिन्न सी परिधि बनाती
मेरे जीवन की लघुबाती

जलकर बुझती, बुझकर जलती
संघर्षों के बीच मचलती
क्रीड़ाओं में लिये निरन्तर,
अपनी पीड़ाओं की थाती
मेरे जीवन की लघुबाती





उलझ गया !

जीवन के आँगन में
सूर्य की सुनहली किरणें आयी
मैं उठा
नगर-नगर
इधर उधर भटका
डोलते गाली
गली दो क्षण
अवसर न मिला
सुख से बैठने का।

सुदूर देश में
एक उपवन
नाच उठा मेरा मन, देखा—

कुसुम की आँखों में मधुमास;
उसकी पँखुड़ियों पर
बसाया नीड़
बस गया संसार
था सुख अपार
अर्पित कर दिया
तन-मन-धन,
यह छोटा सा जीवन।

बस! बस!! बस!!!
कली चीख उठी
मैं सिहर गया
रोष में बोली—
'यह तुम्हारी कमजोरी है'

क्या—
मेरा पूजन
आराधन
अर्पित जीवन
सब कमजोरी?

रो पड़ा मैं
प्याला अधरों तक ही रह गया
उसने मुझे
जाने क्या-क्या कहा
पँखुडियाँ हिलायी
पर मैं न हटा
उन्ही मे छिपा रहा
उसकी इच्छा के विरुद्ध
क्योंकि मैं लाचार
मेरा सब अन्तर-बाहर
उलझ गया
उसकी पाँखों में।

यह मेरा भय

तुम्हारा इधर उधर आना जाना
इन उनसे बोल-बोल हँसना
तुम्हारी सहज मुस्कानों का
सबको पुलकित करना
चल चितवन का
इधर उधर बहकना
भटकना
ये सभी सहज-स्वाभाविक
ये सब निश्छल
पर जाने क्यों
सिहर सिहर जाता हूँ मैं
काँप काँप उठता हूँ।

स्वयं से हो रही ईर्ष्या
भय लग रहा संसार से
हृदय कसकने लगता है
मैं सारी रात व्यर्थ
बदलता करवटें
डरता रहता हूँ—
तुम्हारी रूप राशि की सरिता
बाँध तोड़ कर बह न जाये
यही भय
सोने नहीं देता।

मैं ही तो कहता था—
तुम आओ, जाओ, हँसो, बोलो
अब भी कहता हूँ—
पर तुम जब ऐसा करती हो
क्यों मुझको भय लगने लगता है
मन ऐसा करता है
कि छाया-सा
तुम्हारे संग-संग डोलूँ !

यह मेरा भय मेरे लिये समस्या है,
एक पहेली है, उलझन है,
सम्भव नहीं कि हर क्षण
मैं तुम्हारे साथ छाँह सा लगा रहूँ
बहुत काम हैं तुमको—
मुझको
पर तुम जब आँखों से ओझल हो जाती हो
चौंक उठता हूँ
डर जाता हूँ, सिहर उठता हूँ
व्यर्थ की आशंका
व्यर्थ का भय
पागल बना रहा है मुझको।



निर्वेद • • • •

- बालू का मकान
- अब मैं तुमसे क्योंकर बोलूं?
- क्या खेलोगे मुझसे होली?
- किया कौन अपराध बताओ
- मुस्कानों की खोज व्यर्थ है
- चुप है एकाकीपन मेरा
- मूक व्यथा की वाणी
- क्यों मैं उदास, क्यों तुम उदास ?
- याद आ रही हार-जीत की
- आज पतंगों का त्योहार



चुप है एकाकीपन मेरा
मुझको नीरवता ने घेरा

मेरे जीवन में प्रथम बार
आया बसंत का कुछ उभार
प्यार भरी रस की बूंदों का
मैंने भी पाया आस्वादन
मरुथल वासी के लिये बूंद
अमृत की धारा के समान

बेघर वाले ने घर पाया
रोता-रोता मैं मुस्काया
तुमने कितनी कृपा उड़ेली
कितना था तेरा धन्यदान
सुखी रहो तुम मेरे जीवन
मेरे प्राणों के सरस प्राण

ठहरो ! यह तुम क्या करते हो
कौन भाव मन में भरते हो
बना हाथ से एक घरौंदा
और पांव से उसको रौंदा
रुको - रुको कुछ सोचो समझो
बनो न तुम इतने नादान





अव मैं तुम से क्यों कर वोलूं ?

रोया वचपन रोता यौवन
रोना ही है इस जग का धन
रोने धोने की दुनियाँ में, सुख की सीमा कहाँ टटोलूं
अव मैं तुमसे क्यों कर वोलूं ?

हँसकर भी तो रोना होगा
रोकर जीवन खोना होगा
भार हो रहा जीवन जग में, किसी तरह से उसको ढोलूं
अव मे तुमसे क्यों कर वोलू ?

कितने फूल उगाये मैंने
केवल काँटे पाये मैंने
सुधियों के वे चित्र पुराने, विस्मृति के भावों से धोलू
अव मैं तुमसे क्यों कर वोलूं ?

जिस धरती में और गगन में
मधु की रिमझिम रिमझिम बरसे
बिखर रही है पी पी वाणी, क्या उसमें विस्मय घोलूँ
अब मैं तुमसे क्यों कर बोलूँ ?

मैंने सब सपना माना था
जो सपना सो अपना था
टूट चुके अब सपने बंधन, क्या उनको जोड़ूँ क्या खोलूँ
अब मैं तुमसे क्यों कर बोलूँ ?

जितना होना, होना होना
होना तो कुछ होना होना
जितना दोष कौन हमारा, होना ही है होकर रो लूँ
अब मैं तुमसे क्यों कर बोलूँ ?





क्या खेलोगे मुझसे होली ?

मत छेड़ो मुझको रहने दो
जो कुछ सहता हूँ सहने दो
क्यों कर भला तुम्हें भायेगी, मेरी दुख दर्द भरी बोली
क्या खेलोगे मुझसे होली ?

नाचो गाओ मौज मनाओ
दीवानों की ओर न आओ
कवि का रोना कब मिटने का, ठहरो यूं मत करो ठिठोली
क्या खेलोगे मुझसे होली ?

देख सको तो देखो आओ
मेरी ज्वाला धधका जाओ
मेरे उर में जलती धू धू प्रतिपल अरमानों की होली
क्या खेलोगे मुझसे होली ?

मैंने कितनी होली खेली
मैंने कितनी पीड़ा झेली
मैं भी दर दर घूमा भटका, फिर भी खाली मेरी झोली
क्या खेलोगे मुझसे होली ?

मैंने सुख का गाना गाया
पर जग को वह कभी न भाया
मेरे सपने टूट चुके हैं, छूट चुकी हैं स्मृतियाँ भोली
क्या खेलोगे मुझसे होली ?

मेरे कारण कौन विकल है
युग सा किसे बना प्रतिपल है
किसके कपोल मुरझाएँगे, यदि मैं न मलूं उन पर रोली
क्या खेलोगे मुझसे होली ?

कौन सुनेगा मौन तराना
पीड़ाओं का यह अफ़साना
बीत गये दिन बीती रातें, अब न रही भावों की टोली
क्या खेलोगे मुझसे होली ?

अरमानों की चिता सजा कर
आहों से ज्वाला धधका कर
मैंने मन के रंग उड़ाये, जो होली होनी थी होली
क्या खेलोगे मुझसे होली ?





किया कौन अपराध बताओ

कदम कदम पर काँटे रोड़े
क्षण-क्षण प्रतिपल ठोकर खाना
आते ही मुस्कान अधर पर
नयनों से पानी वह जाना

प्रेम पिपासा युगों युगों की
बड़े भाग्य से साकी पाना
लाते ही अधरों तक हाला
प्याला हाथों से गिर जाना

चुन चुन जग के तिनके पत्ते
कहीं डाल पर नीड़ बनाना
झंझा के झोंकों का आकर
उसको तोड़तोड़ बिखराना

चुन चुन कर आशाएँ मन की
उर में उनका साज सजाना
और निराशा की बदली का
उनको आँसू से नहलाना

सोये से मन के तारों को
छेड़ रहा था एक तराना
जाने किन निर्मम हाथों से
तार तार का तोड़ा जाना

सबको भुरा सुराही, मुझको
बूंद-बूंद को भी तरसाना
औरों को तो गीत प्रेम के
मुझे रुदन का यह अफ़साना

किया कौन अपराध बताओ
जिसका यह फल पाता हूँ मैं
जीवन भर मधुशाला ढूंढी
प्यास लिये पछताता हूँ मैं





मुस्कानों की खोज व्यर्थ है
जी भर-भर कर रो ले पागल

कैसा मधु कैसी मधुशाला
साकी ने कब कुछ भी ढाला
प्यासा ही रह गया युगों से
यह जीवन का रीता प्याला
मुस्कानों की खोज व्यर्थ है
आँसू से मुंह धोले पागल
जी भर भर कर रो ले पागल

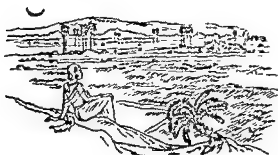
प्यास भरी सी आस लगाये
रट के गीत पपीहा गाये
सिसक रही अनसुनी पुकारें
बादल ने पत्थर बरसायें
जगती की इस निष्ठुरता में
तू करुणा मत घोले पागल
जी भर भर कर रो ले पागल

ऐसी कौन कला कर जाता
कोई काँटों में भर जाता
और वहीं पर आह! किसीका
फूलों से दामन भर जाता
अपनी पीड़ा को तू अपने
उर में आज टटोले पागल
जी भर भर कर रो ले पागल

पूर्व जन्म का यह फल होगा
विधना का शायद छल होगा
यह अनन्त सा विरह बावला
मधुर मिलन का क्यों पल होगा ?
यह संसार प्यार का इसमें
भार दुखों का ढो ले पागल
जी भर भर कर रो ले पागल

फटा भाग्य सीना ही होगा
मर मर कर जीना ही होगा
जीवन भर हाला के बदले
तुझे गरल पीना ही होगा
अपने मनमें, अपनेपन में
अपना दर्द सँजोले पागल
जी भर भर कर रो ले पागल।





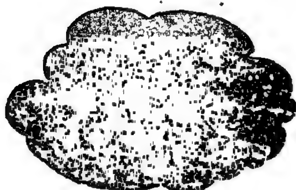
चुप है एकाकीपन मेरा

है मौन धरा, है मौन गगन
तरु भी चुप है, है शान्त पवन
शशि मौन बना
चुप तारागन
किस से पूछूं ?
मैं क्या बोलूं ?
कौन सुनेगा, कौन ? मौन सभी सब मौन !

चुप नीड़ों में खगकुल सोया
सपनों में सारा जग खोया
निस्वरता ने
स्वर को धोया
मैं विह्वल हूँ
किससे बोलूँ ?
देगा उत्तर कौन ? मौन सभी सब मौन !

चुप है एकाकीपन मेरा
मुझको नीरवता ने घेरा
उफ् ! आज दिनों-
का यह फेरा
यदि आह हृदय-
से निकल पड़े
अपराध कौन ? मौन सभी सब मौन !





मूक व्यथा की वाणी

मूक वेदना ले नयनों में
देख रहे क्या तारे ?
किस निष्ठुर की विकल प्रतीक्षा-
में बैठे मनमारे !

बीत चली रजनी की वेला
पलकें गिर न सकेंगी
अन्तस्तल से, अपने प्रण से
पलभर हट न सकेंगी

दिसम्बर '६०

हूक भर रही है अन्तर में
मूक व्यथा की बानी
एक-एक स्वर बन जाता है
जिसकी अकथ कहानी

दुखी देख कर तुम्हें चाह से
आज चाँद मुस्काता
यह निर्मम जग सदा अश्रु पर
अपना हास बिछाता

युग-युग बीते बने रहे तुम
मौन तपस्वी त्यागी
तुम्हें देख कर ही जीते हैं
जग के सब अनुरागी

नयनों में बन कर छा जाते
तुम विरही की आशा
पाता हूँ तुम में मैं अपने
प्राणों की परिभाषा।





क्यों मैं उदास? क्यों तुम उदास?

तुम मुझसे मैं तुमसे पूछूँ
क्यों मैं उदास, क्यों तुम उदास?

यह क्या मजबूरी? मिलकर भी
प्यासी है इतनी साँससाँस
यह कैसी दूरी? दूरी पर
रह कर भी इतने पास-पास

तुम से मेरे मन ने सीखा
मन ही मन में घुट-घुट जाना
मेरे मन से, तेरे नयनों-
ने सीखा आँसू बरसाना!

याद करो क्या पहले भी तु
मूक व्यथा से यों रोयी थ
प्रेमी के पल भर वियोग
क्या ऐसी सुधबुध खोयी थ

याद करो तुम, और कभी तो
पल-पल का यह मूल्य नहीं था
जीवन के नश्वर क्षण-क्षण का
लेखा जोखा कभी कहीं था ?

तुमने कब जाना यह धड़कन
हर क्षण उर में आती जाती
तुमने कब जाना यौवन की
साँस-साँस भी प्यार लुटाती ?

सच बोलो, क्या कभी और भी
इतना प्यार किया था तुमने
यौवन की मादक हाला को
भर-भर जाम पिया था तुमने ?

कब इतनी बेचैन हुई तुम
कब तुम थी इतनी मुस्कायी
आँखों के मिल जाने में ही
कब ऐसी खुशियाँ थी पायी ?

स्पंदन उर का दूरदूर से
कैसे हम तुम सुन लेते थे
दो प्राणों का, दो साँसों का
ताना बाना बुन लेते थे ?

हो रहा प्रश्न यह मुखर मधुर
हर ओर हमारे आस - पास
क्यों मैं उदास, क्यों तुम उदास
रह कर भी इतने पास पास ?







याद आ रही हार-जीत की

आज याद आ रही अचानक
वे अतीत की बातें
अपनेपन की प्यार भरी-सी
हार जीत की बातें

मुस्काने से लगे आज वे
सूने चाँद सितारे
आज सुरभि से भीग सुमन ने
बरबस मुझको मारे

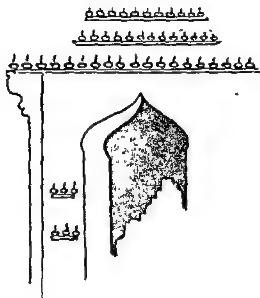
हवा चली फिर धीरे-धीरे
मेरा तन सहलाती
और चाँदनी रस धारा में
मुझको है नहलाती

वल्लरियों का नृत्य और
इन फूलों का मुस्काना
अलियों का आयाचन,
कलियों का मधुकोष लुटाना

कोकिल और पपीहा ने फिर
छेड़ा वही तराना
जिसका एकएक स्वर मेरे
जीवन का अफ़साना

बहने लगी वेग से पल में
पीड़ा बन कर पानी
मचल उठी अन्तर आँखों में
वह भूली नादानी।





आज पतंगों का त्यौहार

पहन पहन कर वस्त्र रँगीले
बनकर आज अजब चमकीले
आये दीपावलि के द्वारे, बोले ! देवी खोलो द्वार
आज पतंगों का त्यौहार

खोलो द्वार हमें अपनाओ
युगों-युगों की प्यास बुझाओ
मिलन कामना लेकर मन में, मचल रहा है पागल प्यार
आज पतंगों का त्यौहार

स्वर-स्वर में मादकता भर दो
यह जग जीवन समरस कर दो
मधुर मिलन के गीत मनोरम, गायें विरह-वीन के तार
आज पतंगों का त्योहार

जुटी देख शलभों की टोली
हवा चली फिर उनसे बोली
रुको ! जला दे कहीं न पल में, तुम्हें तुम्हारा पागल प्यार
आज पतंगों का त्योहार

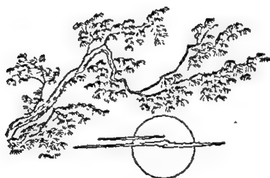
हम वर्षों से विकल वियोगी
मिलन भाव के भागी-भोगी
रहने दो प्रिय आलिंगन में, बहने दो मधुरस की धार
आज पतंगों का त्योहार

पगली पीड़ाओं में पलना
जग इसको कहता है जलना
यह जीवन का दीप बावले, इसे स्नेह से साज सँवार
आज पतंगों का त्योहार



प्रकृति ० ० ० ० ०

- रंग मंच सी सजी
- मधुर मधुर मुस्काये चाँदनी
- जिसके संकेतों पर फिरता



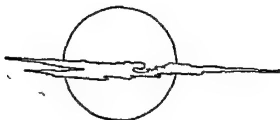
रंग मंच सी सजी

रंग मंच सी सजी यह धरती मनोरम है
इठला रही है हवा मंद मंद डोल कर

नृत्य-रत हो रहा द्रुमों का दल दोलित हो
कलियाँ उड़ेलती पीयूष रस घोल कर

थिरक रही है चाँदनी की मुस्कान मंद
कण-कण में रही है [illegible] कल्लोल कर

विमल विभासे भरी प्रकृति प्रिया की छटा
देख रहा व्योम तारकों के दृग खोलकर



मधुर मधुर मुस्काये चाँदनी

चुपके-चुपके छिपकर आयी
साजन से मिलकर शरमायी
शशि के आलिंगन में बँधकर, रिमझिम रस बरसाये चाँदनी
मधुर मधुर मुस्काये चाँदनी

अँधियारे के पथ से आना
पिया मिलन के साज सजाना
मिलकर जैसे एक हो गई, पुलकित मन हरषाये चाँदनी
मधुर मधुर मुस्काये चाँदनी

मौन मिलन के मधुमय गाने
मालकोश के छेड़ तराने
लहरों ने दी ताल, नृत्य-रत नव-नूपुर खनकाये चाँदनी
मधुर मधुर मुस्काये चाँदनी

कुसुम-कुसुम में कली-कली में
कुंज - कुंज में गली-गली में
पुरवैया के रंग मंच पर, रस का रास रचाये चाँदनी
मधुर मधुर मुस्काये चाँदनी

झूम रहे तिनके तरु सारे
मिला रहे स्वर में स्वर तारे
सौतिन बनकर आज चकोरी को जैसे तरसाये चाँदनी
मधुर मधुर मुस्काये चाँदनी

अवनी अम्बर में रस बरसे
कण-कण में मादकता सरसे
मुक्त हस्त से रजत लुटाती, जड़ चेतन को भाये चाँदनी
मधुर मधुर मुस्काये चाँदनी

आज मिलन की बेला आयी
चिर वियोग की हुई विदायी
प्रिये ! चाँदनी में हम लय हों, हममें लय हो जाये चाँदनी
मधुर मधुर मुस्काये चाँदनी





जिसके संकेतों पर फिरता

मदिर उषा के पावन पथ पर हीरक हेम बिछाता
नभ पुष्पों का हार बना कर धरती को पहनाता

जिसने छलका दी मदिरा से जग की रीती प्याली
प्राची के आँगन में बिखरी नव गुलाल की लाली

जिसके चिर चुम्बन से सहसा सकुच उठी शशिबाला
सघन प्रतीची का फिर उसने मुख पर घूँघट डाला

जिसकी छवि की छाया छूकर खुली कमल की आँखें
रस सिंचित सी हुई मनोरम मन मधुकर की पाँखें

जिसकी पग ध्वनि से ही थिरका, सोये उर का स्पंदन
जाग उठा नव जीवन जग में खगकुल करता वंदन

जिससे पाकर सुरभि मनोरम मलय पवन मदमाता
कोमल कलियों के आँचल में मधु मुस्कान लुटाता

लेकर किरणों की पिचकारी रचा रहा जो होली
रँग सी उठी अचानक जिससे भूमि भामिनी भोली

जिसके संकेतों पर फिरता परिवर्तन का फेरा
वही खड़ा है दूर क्षितिज पर लेकर स्वर्ण सवेरा



विदेश ◦ ◦ ◦ ◦ ◦

- वियना
- पेरिस
- स्विटजरलैंड



यही प्रकृति है भारत में भी
और यही जादू मन्तर है
दोनों में है साम्य सलोना
फिर भी दोनों में अन्तर है।



वियना

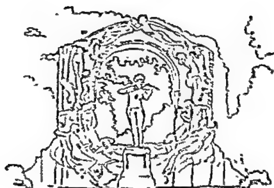
यह वियना की मादक मस्ती
यह वियना का मतवालापन
यहाँ सुरा में तैर रहा है
मछली सा मानव का जीवन

भर-भर मधु के कलश सभी
निज द्वार खोल बैठा साकी
पीने वाले पीते जी भर
प्यास रही फिर भी बाकी

ऐसे ही है कैसे मुस्काते
बैठी [illegible] लिये
अधरों पर संगीत मधुर
कर में अंगूरी पात्र लिये

मधु के [illegible] ने आली
[illegible] सरस पद लेकर
ले लेतीं मानव की हस्ती
अपनी मादक मस्ती देकर

कण-कण में नूपुर की रुनझुन
हाट-हाट में मधुशाला
विदना देता है जग को
संगीत, सुन्दरी औ हाला



उभरे हुए कपोल, कुन्तलों का
उन पर सहलाना
धीरे - धीरे मुस्कानों की
मदिरा मधुर पिलाना

यह मधुशाला जिसमें प्रतिपल
भीड़ भरी पीनेवालों की
जी जी कर मरनेवालों की
मर मर कर जीनेवालों की

यहाँ नहीं ताले लगते हैं
कहीं रूप के घर में
अपनी - अपनी मन चाही है
सब नारी औ नर में



उभरे हुए उरोज, कुन्तलों का
उन पर लहराना
धीरे - धीरे मुस्कानों की
मदिरा मधुर पिलाना

यह मधुशाला जिसमें प्रतिपल
भीड़ भरी पीनेवालों की
जी जी कर मरनेवालों की
मर मर कर जीनेवालों की

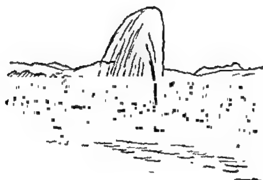
यहाँ नहीं ताले लगते हैं
कहीं रूप के घर में
अपनी - अपनी मन चाही है
सब नारी औ नर में

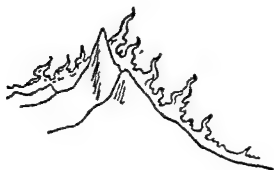


मुस्कानों की प्यास, प्यास से मुस्कानों का मेल हो रहा
भरता सा जीवन प्राणों में, प्रकृति पुरुष का खेल हो रहा
यही प्रकृति है भारत में भी, और यही जादू मन्तर है
दोनों में है साम्य सलोना, फिर भी दोनों में अन्तर है

सदा सुहागिन इस की धरती, सजी हुई मादक हाला-सी
और वहाँ उन्मन उदास वह रूपमयी विधवाबाला सी
प्यार कैद है और बंधी जंजीरों में मुस्कान वहाँ है
प्राण-प्राण पर पाबंदी है, मौन प्यार का गान वहाँ है

धूप छाँह में, रूप रो रहा आवरणों के घेरे में है
यहाँ जागरण और वहाँ की दुनिया रैन बसेरे में है
हास विलासों से कण-कण का मन आबाद हुआ करता है
यह है स्विटजरलैण्ड कि जिसमें ग़म भी शाद हुआ करता है





आयी वेला वलिदानी रे
अब कैसी आनाकानी रे
चढ़ चल दुश्मन की छाती पर
बढ़ चल मेरे सेनानी रे

तरुओं के पत्तों-पत्तों में
जागी नई जवानी है
आज नया उल्लास बन गया
दृगों - दृगों का पानी है
इन्क़लाब की सबल तुला पर सबका साहस तोल उठा
नई जिन्दगी नया जागरण कण कण में कल्लोल उठा

ऊषा ने दी आग, खगों ने
नव विप्लव के गान दिये
नये सृजन की अभिलाषा ने
मिटने के अरमान दिये
धरती के रीते आँगन में जागृति का रस घोल उठा
नई जिन्दगी नया जागरण कण-कण में कल्लोल उठा

चूर हो गई तम की दुनिया
गम की दुनिया दूर हुई
मानव के मन की मजबूरी
मिटने को मजबूर हुई
नई उमंगों में जगती का ज़र्रा ज़र्रा बोल उठा
नई जिन्दगी नया जागरण कण - कण में कल्लोल उठा





९ अगस्त

दहक उठी यों लहक भरी सी
क्षण क्षण के कण-कण में आग
युगों - युगों की सोयी ज्वाला
पड़ी अचानक जैसे जाग

मर मिटने की भरी भावना परवानों की टोली में
विद्रोही स्वर गूंज रहे हैं युग की कुंठित बोली में

सर पर कफ़न बाँध कर निकले
देश - प्रेम के दीवाने
भैरव के रव से सज्जित हैं
आज सोहिनी के गाने

कसकभरी म्यानों से निकलीं, चमकभरी सी तलवारें
काँप उठी, हिल उठीं हवा से, आज जुल्म की मीनारें

प्राण - प्राण ने अँगड़ाई ली
मौन क्रान्ति कल्लोल उठी
काँप उठा अम्बर चलदल सा
धरती डगमग डोल उठी

खुला तीसरा नेत्र रुद्र का, विप्लव का जयघोष हुआ
बलिदानों से बलिवेदी का आज पूर्ण परितोष हुआ

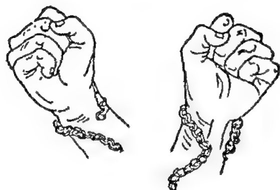
नौ अगस्त का दिन है आया
नौ अगस्त की रात मिली
डगर-डगर में नगर-नगर में
कुछ अनहोनी बात मिली

जाग उठे मरघट के मुर्दे, क़ब्रों में कुहराम हुआ
आज शुरू फिर नये सिरे से स्वतंत्रता संग्राम हुआ

टूट चली जंजीर, गुलामी–
की कड़ियां कड़ियां टूटीं
और बेड़ियों ने दम तोड़ा
दुर्दम हथकड़ियां टूटीं

जोश भरे प्रलयी प्राणों से सबकी सजी हथेली थी
आजादी पर मर मिटने की शपथ सभी ने ले ली थी

युग-युग यह जग याद करेगा
विप्लव को, बलिदानों को
आज शहीदों ने फहराये
अपने विजय-निशानों को





१५ अगस्त

आज स्वप्न साकार हो गया
नभ में चमक रहे हैं तारे, झिलमिल झिलमिल प्यारे-प्यारे
मेरी कुटिया के आँगन में, ज्वलित हो उठे दीपक सारे
दशो दिशाएँ आलोकित हैं, पुलकित हर्ष अपार हो गया
आज स्वप्न साकार हो गया

धरती से अम्बर तक उड़ता, अमर तिरंगा प्यारा प्यारा
इन्द्र धनुप बन कर लहराता, स्वर्ग लोक में सुयश हमारा
निखिल विश्व पर इस झंडे के भावों का आभार हो गया
आज स्वप्न साकार हो गया

नील गगन में श्याम सलोने घन का उमड़-घुमड घिर आना
मादकता की मधुमस्ती में विजलीवाला का मुस्काना
हासभरा सा इन्द्र धनुप का वह सतरंगा तार हो गया
आज स्वप्न साकार हो गया

स्वतंत्रता का रथ है आता, पलक पाँवड़े गगन बिछाता
माँ के चरण धो रहा सागर, मलय पवन है चँवर डुलाता
परवशता का बंधन पल में, आज मुक्ति का हार हो गया
आज स्वप्न साकार हो गया

भारत का हर कोना कोना, कितना सुन्दर और सलोना
जगती के तन-मन पर करता, फिर से छविका जादूटोना
स्वर्ग लोक से बढ़ कर सुन्दर, इसका रूप अपार हो गया
आज स्वप्न साकार हो गया

घर-घर में वैभव की मस्ती, बसी अचानक उजड़ी बस्ती
सबके तन - मन में, जीवन में, मचल रही है प्यार परस्ती
चूर हो गईं सब चिंतायें, दूर दुखों का भार हो गया
आज स्वप्न साकार हो गया

शोषण का, अत्याचारों का, कुत्सित पशुता की मारों का
दानवता की दुष्ट वृत्ति का, घृणित विजयों का हारों का
मंद हुआ बल और बंद अब हिंसा का व्यापार हो गया
आज स्वप्न साकार हो गया

उमड़ उठी संसृति में समता, सबमें सब की छाई ममता
उठा रही ऊपर कण-कण को, नीति-प्रीति की पावन क्षमता
मानव को मानव बनने का, अब पूरा अधिकार हो गया
आज स्वप्न साकार हो गया

यह बापू की महा विजय है, वीर जवाहर की यह जय है
अमर शहीदों की कुर्बानी से आया यह सुखद समय है
तूफ़ानों का मिटा बखेड़ा, डूबा बेड़ा पार हो गया
आज स्वप्न साकार हो गया



सेनानी

डग मग डग मग जग डोल उठा
मरघट मे जीवन घोल उठा
भीषण विप्लव की बोली में
जगती का कण-कण बोल उठा

कायरता से कुछ काम न ले
पल भर रुक मत, आराम न ले
काँटों से भरा हुआ पथ है
फिर भी मुड़ने का नाम न ले

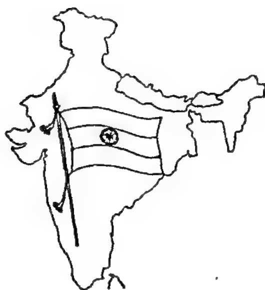
खोता है धीरज! खोने दे
रोता है कोई! रोने दे
ओ तरुण तपस्वी त्यागी रे
जो कुछ होता है होने दे

तू बलिवेदी पर गाता चल
मरते - मिटते मुस्काता चल
तू प्रबल पेशवा वीरों का
काँटों को फूल बनाता चल

सन - सन करती संगीनें हों
मुह बाए खडी मशीनें हों
भौहों में बल, मन में साहस
फिर तने हमारे सीने हों

जीने की चाहे चाह न हो
मरने की भी परवाह न हो
तेरे पद चिन्हों से खाली
तिल भर भी रण की राह न हो

आयी वेला बलिदानी रे, अब कैसी आनाकानी रे
चढ़ चल दुश्मन की छाती पर, बढ चल मेरे सेनानी रे



बरसात

आज अचानक
फट पड़े - बादल
डूब गई सड़कें
बन्द हुईं स्कूलें
चला रहे बच्चे
कागज की नावें
मना रहे रेनी - डे।

खुश हैं दफ्तर के बाबू
बैठ कर घर में-
खा रहे गर्म पकौड़े।
'टेनिस' - स्थगित
'कॉकटेल' असंभव
पड़ोसी 'मैमें'—
देती हैं गालियाँ, बरसात को।

गारा ढोनेवाला 'हरिया'
छुट्टी के कारण
मर रहा भूखों
खड़ा है सटकर
होटल की दीवार से!
बचने को बरसात से!

और मैं मौन
देख रहा आज
मेरे "रिमझिम" के गीत
प्रीत भरे सपने
जो थे बहुत अपने
बह गए-
जीवन की ऐसी ही बरसातों में।